Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 4, March-2019, ISSN 2230-7540

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर आणविक शस्त्रों का प्रभाव

Parmod Kumar*

Lecturer in Political Science, Govt. Sr. Sec. School, Gharawathi, Rohtak

सार – ***परमाणु शस्त्रों की इस शताब्दी ने विश्व राजनीति के कविपय महत्वपूर्ण पहलू और चिन्तनधारा को प्रभावित किया है। हिरोशिमा और नागासाकी पर 6 और 9 अगस्त 1945 को अमेरिका द्वारा छोड़ा गया परमाणु बम शस्त्र जगत का चरम बिन्दु न होकर मात्र शुरूआत थे। इसके बाद विध्वंसक शस्त्रों के निर्माण की प्रक्रिया अबाध गति से चलती रही। आणविक शक्ति के कारण अमेरिका, चीन, फ्रांस और ब्रिटेन ही नहीं बल्कि रूस के नये गणराज्यों (जिसके हिस्से में परमाणु भण्डार हैं) के अतिरिक्त इस क्षमता को हासिल करने की ओर तेजी से लपक रहे तीसरी दुनिया के देश भी विश्व व्यवस्था के समक्ष एक गहरे संकट को आमंत्रण दे रहें।***

----------X----------

आणविक युग की दुविधापूर्ण राजनीतिक स्थिति का वर्णन करते हुए हेनरी किसीजर ने लिखा है।

अणु युग की दुविधाजनक स्थिति ने हमें कहाँ लाकर खड़ा कर दिया है? अधुनातन शस्त्रास्त्रों ने युद्ध की कल्पना को भयावह बना दिया है लेकिन उसका जोखिम न उठाने का अर्थ है प्रतिद्वन्दी को खाली चेक देना। इससे पहले हम इतने शक्तिशाली कभी नहीं थे। हमें आज यह समझना है कि शक्ति अगर लक्ष्यों से सम्बधित न हो तो वह हमारी अच्छा शाक्ति और मनोबल को शिथिल कर देगी। हमें इन दोनों में सन्तुलन लाना होगा।

आज रणनीतियों के समक्ष सबसे बड़ी चुनौति भी यही है कि हम अपनी शक्ति को निर्धारित नीति के लिए किस तरह उपयोग करें।[1]

जेम्स ई दोरोथी ने अपने लेख 'द साइकोलोजी ऑफ़ न्यूक्लियर डेटरेन्स' में अवरोध की नीति का विश्लेषण करते हुए यह मत व्यक्त किया है कि आज के युग में ऐसी मान्यता है कि अणु युद्ध को टालना सभी शक्तियों के लिए हितकर होगा। महाशक्तियों के राजनीतिज्ञ अन्य किसी विवेकसम्मत प्रयोजन से न सही किन्तु उनके परिवार और स्वयं की रक्षा के कारण युद्ध के खतरे को अवश्य टालते रहेंगे। हम अणु शस्त्रों की दोहरी अथवा परस्पर विरोधी भूमिका को सहजता से नजर अंदाज नहीं कर सकतें। इसकी उपस्थिति ने आतंक और उद्वेग निरन्तर बनाये रखा है तो दूसरी ओर महाशक्तियों को भी व्यवहार में संयत बनाया है। किसी शांतिकर्ता के अभाव में अणु आयुधों ने सरकारों को नियंत्रण में रखा है।[2]

वास्तव में महाशक्तियों द्वारा निर्मित इन शस्त्रों ने न केवल अन्य देशों को बल्कि आयुध की अपार शक्ति वाले देशों को भी एक दूसरे से भयभीत कर दिया है। रणनीति के क्षेत्र "अवरोध नीति" इसी पारस्परिक भय की उपज है। एक शक्ति दूसरी शक्ति की तुलना में अपनी सुरक्षा की दृष्टि से किसी तरह पाछे नहीं रहना चाहती। वह दूसरे को आक्रमण का लाभ भी नहीं देना चाहती। अब स्थिति यह है कि कोई भी महादेश आक्रमण का लाभ नहीं उठा सकता। अवरोध की इस नीति से सुरक्षा के नाम पर शक्ति अर्जित करने का विषय एक चक्र वन गया है। संदेह और सुरक्षा के जोखिम सम्बधी भय के कारण इस व्यूह को तोड़ना बड़ा कठिन है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद द्विपक्षीय और सामूहिक सुरक्षा के साथ-साथ दुश्मन की विध्वसंक शक्ति से अधिक शक्ति से अधिक शक्ति एवं क्षमता विकसित करने की नीति को स्वर्गीय चर्चिल जैसे कूटनीतिज्ञों ने ही न्यायोचित ठहराया है। चर्चिल ने अमेरिका के एक विश्वविद्यालय में भाषण करते हुए कहा था।

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर आणविक शस्त्रों का प्रभाव

आज मैं जो देख रहा हूँ उसे आपसे छिपाना उपयुक्त नहीं मानता। यह बात निस्संदेह सत्य है कि अगर अमेरिका के पास अवरोध का अणु बम न होता तो लन्दन और सारा यूरोप कभी का साम्यवादी हो जाता। विश्व शांति हमारा लक्ष्य अवश्य है किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में अवरोध शक्ति ही इसका एक मात्र उपाय है।[3]

www.ignited.in

याद रखने योग्य है कि नये हथियारों (विशेषकर परमाणु हथियारों) के कारण उत्पन्न स्थिति से नीति निर्माताओं के लिए यह फैसला करना कठिन हो गया है कि अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए बल प्रयोग किया जाए या नहीं। अगर कोई बल प्रयोग करे तो अन्त में परमाणु युद्ध की नौबत आ सकती है जिससे सर्वनाश तक का खतरा पैदा हो सकता है और अगर यह बल प्रयोग न करे तो सकता है कि उसे अन्याय और आधारभूत हितों की हानि सहन करनी पड़े। साथ ही यह भी सम्भव है कि बल प्रयोग का सहारा न लेने वाले राष्ट्र को अन्य राष्ट्र कमजोर समझने लगे।

कहना न होगा कि बल प्रयोग करने या न करने की दुविधा मुख्यतः परमाणु अस्त्रों के निर्माण के कारण पैदा हुई है। पहले की स्थिति में राष्ट्र बिना युद्ध के न सुलझने वाली समस्याओं को सुलझाने के लिए आसानी से युद्ध का सहारा ले सकते थे। पर अब वे सर्वनाश के खतरे के कारण युद्ध की बात आसानी से मन में नहीं ला सकते।

पिछले कई वर्षो के इतिहास में कैद उदाहरणों से उजागर होता है कि बल प्रयोग का सहारा मुख्यतः इसी कारण नहीं लिया गया कि - अन्ततः इसके बड़े सर्वग्रासी युद्ध बन जाने का खतरा था। सन् 1962 के अन्तिम दिनों में क्यूबा के सवाल पर अमेरिका और सोवियत संघ में युद्ध छिड़ जाने के आसार घने हो आये थे पर जब अमेरिका ने सोवियत संघ को यह चेतावनी दी कि अगर कैरीबिन सागर से अपने शस्त्र नहीं हटाये तो वह भी परमाणु अस्त्रों का प्रयोग करेगा तो सोवियत संघ ने तत्काल अपने परमाणु अस्त्रों को वहां से हटा लिया। जाहिर है कि यदि सोवियत संघ ऐसा न करता तो इससे सर्वनाश का खतरा सम्भावित था।

यादउ से हटा लिया कि यदि सोवियत संघ ऐसा न करता तो इससे सर्वनाश का खतरा सम्भावित था।

याद रखना होगा कि यदि 1962 में भारत के पास नाभिकीय अस्त्र होते तो 1962 का चीनी युद्ध तथा 1965 और 1971 का पाकिस्तानी युद्ध दोनों टल गये होते।

इसी प्रकार यदि सोवियत रूस विघटन के कगार पर न होता और उसने अमेरिका को खुली चेतावनी दी होती तो खाड़ी में 29 देशों के साथ मिलकर अमेरिका और उसके मित्रों ने इराक की जो बर्बादी दी होती तो खाड़ी में 29 देशों के साथ मिलकर अमेरिका और उसके मित्रों ने इराक की जो बर्बादी की वह हरगिज नहीं होती।

वास्तविकता यह है कि आज परमाणु शस्त्रों ने एक प्रकार के आतंक का सन्तुलन पैदा कर रखा है। आंतक के सन्तुलन के इस युग में राष्ट्र अब एक दूसरे से इतना डरते हैं कि उनमें से प्रत्येक युद्ध से बचने के लिए उत्सुक है जो उनके लिए केवल एक पूर्ण विनाशकारी तापनाभिकीय युद्ध होगा।

युद्ध और शांति से जुड़े विश्लेषक यह मानते हैं कि परमाणु शक्ति अतिमारक सामथ्र्य में रूपान्तरित हो गयी है, जहाँ परमाणु शक्ति विहीन राज्य वास्तव में असुरक्षा के घेरे में आ गये हैं। राजनेता अपनी ही शक्ति का अनुमान अनतर्राष्टीय सम्बधों के परिप्रेक्ष्य में लगा पाने में कठिनाई का अनुभाव करते हैं तथा मानव जाति अपने आप को पागलपन जैसी स्थिति में पाती है। अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण में सी. आई. सल्जबर्गर ने हिरोशिमा और नागासाकी पर परमाणु बम गिरने के 10 वर्ष बाद का प्रभाव स्पष्ट करते हुए लिखा हैः

हिरोशिमा के बाद एक ही दशक में सारे विश्व के सम्बन्ध बदल गये हैं। मुख्य रूप से पराजित राष्ट्रों के साथ संतोष जनक शक्ति समझौता करने की असफलता ने साम्यवादी तथा गैर साम्यवादी तथा गैर साम्यवादी राज्यों के बीच बढ़ती हुई फूट, कड़वी यादों में घायल तथा अस्थिर अर्थव्यवस्थाओं तथा सरकारों वाले नये अति संवेदनशील राज्यों के उत्थान, राष्ट्रवाद के दबावों तथा बढ़ती हुई आकांक्षाओं के प्रस्ताव के उदय तथा दूसरे परिवनों ने राजनीतिज्ञों तथा संस्थानों की क्षमता का परीक्षण करने के लिए काफी गम्भीर समस्यायें पैदा कर दी है। परमाणु यूग के अन्वेषण ने परिवर्तन के इस युग को अत्यधिक प्रयत्नों का युग बना दिया है क्योंकि राजनीतिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक संकट के समय अभूतपूर्व शक्ति का जन्म हुआ है।

आज मानव जाति जिस शांति में जी रही है वह शस्त्रों के आतंक से निकली शांति है। आज की शांति तनावपूर्ण है जिसकी विशेषता है- असमानतायें, जोखिम तथा अविश्वास। आज की समकालीन शांति का उद्देश्य मानव सभ्यता की उतरजीवित है। जैसा कि प्रो. हारावची बताते हैं - विशेषतया इसके तीन प्रमुख लखण हैं-

1. इसकी जड़े राष्ट्रों के पारस्परिक हितों में है जो उतरजीविता की इच्छा से निदेशित होती हैं

2. यह विरोधी को समाप्त किये बिना तथा विरोधों और तनावों के साधन का उन्मूलन किये बिना युद्ध की स्थिति पैदा करती है।

www.ignited.in

3. यह परस्पर सहनशीलता की शांति है।

यह एक सूत्र में बधे रहने वाले भाई नहीं है बल्कि शत्रु है जो पारस्परकि अविश्वासों तथा विकल्प के अभाव के कारण इकट्ठे रह रहे हैं।

पहले भूगोल, जनसंख्या,, प्राकृतिक संसाधन तथा औद्योगिक क्षमता किसी राष्ट्र की शक्ति के मुख्य आधार होते थे लेकिन आज एक छोटा सा राष्ट्र भी परमाणु तकनीक प्राप्त कर परमाणु क्षमता के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धो में कियी बडी शक्ति के सामने न केवल ताल ठोक सकता है बल्कि प्रतिद्वन्दियों के लिए गम्भीर खतरा बन सकता है। इजराइल द. अफ्रीका तथा पाकिस्तान इस उद्देश्य को दृष्टि में रखकर इस दिशा में लालायित हैं।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय सम्बधों के स्वरूप पर परमाणु शस्त्रों ने अपना गहरा प्रभाव डाला है। निवारकों के रूप में परमाणु शस्त्र अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को लाभप्रद बनाने में सहायता देने के बजाय अधिक हानि पहुचा रहे हैं।

संदर्भ

1. Henty KiSsinger: Nuclear weapons and Foreign Policy, pp. 6-7

2. दोरोथी जेन्सः द अमेरिकन रिव्यू, आटोमन 1977, वो 22. पृ. 25-26

3. नारमन डी पामरः इण्टरनेशनल रिलेशन्स, पृ. 723

Corresponding Author

Parmod Kumar*

Lecturer in Political Science, Govt. Sr. Sec. School, Gharawathi, Rohtak

parmodkharainti@gmail.com